M.A. Public Administration – Semester II

Paper: Administrative Behaviour

Teacher : Dr. Megha Pandey

संचार (Communication)

संचार या संप्रेषण (Communication) एक लोकप्रिय एवं चिर–परिचित शब्द है, किन्तु, अकादमिक दृष्टि से इसकी संपूर्ण व्याख्या प्रस्तुत करती परिभाषा विकसित नहीं हुई है क्योंकि संचार की प्रक्रिया मानव–व्यवहार की जटिलताओं से जुड़ी है। तथापि, प्रबन्ध एवं प्रशासन के क्षेत्र में संचार को परिभाषित एवं वर्गीकृत करने के महत्वपूर्ण प्रयास हुए हैं।

परिभाषा

आर्डवे टीड के अनुसार, ''संचार वह प्रक्रिया है जिसमें एक व्यक्ति अपने विचार और भावनाएँ दूसरों तक पहुँचाता है।''

न्यूमैन एवं समर के शब्दों में, '' संचार, दो या दो से अधिक व्यक्तियों के तथ्यों, विचारों, सम्मतियों या भावनाओं का पारस्परिक आदान–प्रदान है।''

लुईस ए एलन के शब्दों में, ''संचार, उन सभी बातों को योग है जिन्हें एक व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति के मस्तिष्क में समझ–बुझ उत्पन्न करने के लिए पुल के रूप में प्रयुक्त करता है। इसके अन्तर्गत कहने, सुनने तथा समझने की एक व्यवस्थित एवं अनवरत् प्रक्रिया सम्मिलित है।''

मिलेट द्वारा प्रतिपादित परिभाषा को सबसे सटीक एवं स्वीकृत परिभाषा माना जाता है। उसके अनुसार, '' किसी साझा उद्देश्य की साझा समझ ही संचार है।''

इस प्रकार, संचार –

- एक सतत् चलने वाली प्रक्रिया है।
- किसी तथ्य, सूचना या भावना को एक स्थान (व्यक्ति) से दूसरे स्थान (व्यक्ति) पर प्रेषित करने की प्रक्रिया है।

- कई माध्यमों (जैसे–पत्र–व्यवहार, टेलीफोन, रेडियो, टी.वी., इन्टरनेट, पत्रिकाएँ आदि) या प्रणालियों द्वारा इसे संपादित किया जाता है।
- संचार के प्रमुख तत्व हैं – प्रेषक (सूचना भेजने वाला), सूचना/जानकारी, सूचना का माध्यम, सूचना प्राप्तकर्ता तथा प्रत्युत्तर/वांछित प्रतिक्रिया (फीडबैक)।
- संचार व्यवहार–विनिमय का परिचायक है जिसका उद्देश्य दूसरों को अपनी कार्य स्थिति या समस्या से परिचित करवाना या प्रभावित करना है।

संचार में यह बात निहित है कि संदेश किसी प्राप्तकर्ता के पास भेजा जा रहा है, वह संदेश प्राप्त करके क्या करता है, प्राप्त संदेश का क्या व्यावहारिक प्रभाव पड़ता है, यह बात संचार–प्रक्रिया में केन्द्रीय महत्व रखती है।

संचार : प्रकार एवं महत्व

संदेश या सूचना या तथ्य की प्रकृति, प्राप्तकर्ता की प्रकृति या प्राप्तकर्ताओं के समूह, सूचना एवं संगठन की वैधानिकता, संगठन में सूचना प्रवाह तन्त्र के स्वरूप तथा संचार प्रक्रिया आदि के आधार पर संचार को कई श्रेणियों में बाँटा जाता है। यह इस प्रकार है –

1. **प्रकृति के आधार पर –**

- औपचारिक संचार ; संगठन में कार्मिकों के मध्य कार्य सम्बन्धी संचार जो निर्धारित प्रक्रिया, नियम के अन्तर्गत होता है।
- अनौपचारिक संचार ; यह संगठन में कार्मिकों के परस्पर सम्बन्धों, व्यवहार के आधार पर स्वयमेव निर्धारित संचार है।

2. **माध्यम के आधार पर –**

- लिखित संचार ; लिखित या मुद्रित रूप में दूसरों तक पहुँचाया जाता है।
- मौखिक संचार ; बोलने एवं सुनने की विधि द्वारा संचार, सर्वाधिक लोकप्रिय तथा परम्परागत संचार है।
- प्रतीकात्मक संचार ; इशारे या प्रतीक द्वारा प्रेषित संचार।

3. **प्रवाह – तन्त्र के आधार पर –**

- अधो संचार ; संगठन के उच्चाधिकारी द्वारा अपने अधीनस्थों से किया जाने वाला संप्रेषण।

- ऊर्ध्व संचार ; संगठन के निम्नाधिकारियों द्वारा अपने उच्चाधिकारियों से किया जाने वाला संप्रेषण।
- समस्तरीय संचार ; संगठन या पदसोपान क्रम में समान स्तरीय कार्मिकों द्वारा आपस में किया जाने वाला संचार।

4. **आन्तरिक एवं बाह्य संचार** –

   संगठन के अन्दर, कार्मिकों से किया जाने वाला संप्रेषण आन्तरिक संचार है तथा संगठन से बाहर किसी ओर संगठन, सरकार, जनता आदि से किया जाने वाला संप्रेषण बाह्य संचार है।

उपरोक्त प्रत्येक संचार प्रकार के अपने–अपने लाभ एवं सीमाएँ हैं। विषय की प्रकृति, महत्व या गंभीरता के आधार पर संचार–प्रकार एवं संचार की प्रक्रिया का चयन किया जाता है। संचार प्रशासनिक व्यवहार का एक महत्वपूर्ण तत्व एवं संगठन का महत्वपूर्ण सिद्धान्त माना जाता है। **मिलेट** ने संचार को 'प्रशासनिक संगठनों की रक्तधारा' तथा **पिफनर** ने 'प्रबन्ध का हृदय' कहा है। जिस तरह आधुनिक समय सूचना एवं प्रोद्यौगिकी के प्रभाव स्वरूप त्वरीत रूप से जागरूक, विकसित, गतिशील एवं प्रभावशील होने में संलग्न है, उसी प्रकार प्रशासनिक संगठन भी अपनी गतिशीलता, जीवन्तता, निष्पादन–दक्षता, तथा कार्य–कुशलता हेतु संचार तन्त्र तथा सूचना प्रोद्यौगिकी तकनीकों पर निर्भर होते हैं। संतुलन, नियन्त्रण, समन्वय, प्रोत्साहन, मनोबल–निर्माण, नियोजन तथा एकीकरण हेतु संचार सशक्त उपकरण है। कार्मिक–संतुष्टि, उपभोक्ता या हितग्राहियों की संतुष्टि, शिकायत निवारण, प्रशासनिक प्रभावशीलता, संगठनात्मक विकास, सुधार एवं नावाचार, सुलहवार्ता तथा अनुशासन आदि पूर्णतः संचार आधारित गतिविधियाँ हैं। संगठन के आन्तरिक कार्य–व्यवहारों के स्वरूप का निर्धारण संचार द्वारा ही होता है, साथ ही संगठन के बाहर उसकी छवि, साख या विश्वसनीयता आदि भी कुशल संचार द्वारा ही स्थापित होती है। संचार–व्यवस्था के अभाव में, संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति असंभव है। संचार एवं संचार–व्यवस्था किसी संगठन के लिए जितनी महत्वपूर्ण होती है उतना ही महत्वपूर्ण होता है संचार–व्यवस्था का तकनीकी अध्ययन एवं प्रभावी संचार में आने वाली बाधाओं का उचित निराकरण।

एल्विन डॉड के अनुसार, '' संचार, प्रबन्ध की मुख्य समस्या है।'' क्योंकि, चूंकि यह अपने आप में संगठन के अन्य समस्त कार्यों को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है, इसमें

हुई छोटी सी चूक, गलती या बाधा, अन्य गतिविधियों को नकारात्मक रूप से प्रभावित कर देती है। प्रभावी संचार के मार्ग में कई प्रकार की बाधाएँ आती है ; जैसे –

- भाषागत, अर्थगत या व्याख्या की समस्या,
- संचार माध्यम की संख्या, गुणात्मकता या उपलब्धता की समस्या,
- संगठनात्मक प्रक्रियागत दूरी या निकटता,
- संचार हेतु कार्मिक योग्यता एवं इच्छा शक्ति। आदि।

प्रभावी संचार हेतु अनेक विद्वानों ने अपने–अपने विचार दिए हैं, लेकिन व्यवहार विज्ञान के विद्वानों की मान्यता अनुसार संचार से अधिक जटिल अन्य कोई प्रशासनिक गतिविधि नहीं है, न ही इससे अधिक महत्वपूर्ण।

अभिप्रेरण (Motivation)

अभिप्रेरण या अभिप्रेरणा (Motivation) दो शब्दों से मिलकर बना है – 'अभि' तथा 'प्रेरण'। 'अभि' उपसर्ग है जो किसी शब्द के आगे लगकर 'श्रेष्ठता, अति, समीप या बार–बार' का अर्थ देता है। 'प्रेरणा' वह कारक है जो किसी व्यक्ति को कुछ करने या प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित या उत्साहित करता है। इस प्रकार, अभिप्रेरण, वह आन्तरिक कारक है (जो सामान्यतः बाह्य कारक से प्रभावित होकर) जो व्यक्ति को, उसकी इच्छा शक्ति को कुछ प्राप्त करने हेतु प्रेरित तथा गतिशील करता है। प्रबन्ध के क्षेत्र में अभिप्रेरण 'M' Factor के नाम से लोकप्रिय है।

हेराल्ड एफ.गार्टनर के अनुसार, ''अभिप्ररेण, मनुष्य के व्यवहार को समझने का उद्देश्यपूर्ण तथा उपयोगी माध्यम है। मनुष्य की आवश्यकताओं उत्प्रेरक तथा लक्ष्यों के बीच अन्तरसम्बन्ध ही अभिप्रेरण है।''

मैक्फारलैण्ड के शब्दों में, ''अभिप्रेरणा एक विधि है; जिसमें प्रेरणाओं, इच्छाओं, महत्वाकांक्षाओं, प्रयत्नों या आवश्यकताओं द्वारा मानवीय व्यवहार का निर्देशन, नियंत्रण तथा स्पष्टीकरण किया जाता है।''

ई.एफ.एल. ब्रेच के शब्दों में, ''अभिप्रेरण, सामान्य प्रेरणा देने वाली प्रक्रिया है जो किसी दल के सदस्यों को प्रभावी ढंग से मिलकर कार्य करने, अपने दल के प्रति वफादरी दिखाने, सौंपे गए कार्यों को ठीक प्रकार से निष्पादित करने तथा संगठन के उद्देश्य एवं कर्तव्य पूर्ति के लिए समुचित ढंग से भाग लेने के लिए प्रेरित करती है।''

फ्रेड लुथांस के अनुसार, ''अभिप्रेरणा, एक प्रक्रिया है जो शारीरिक या मानसिक कमियों या आवश्यकताओं से शुरू होती है तथा किसी लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु व्यवहार को क्रियाशील करती है।''

अभिप्ररेण की अवधारणा एवं प्रक्रिया मूलतः मनोविज्ञान से सम्बन्धित है। मनोवैज्ञानिकों की दृष्टि में अभिप्रेरण वह शक्ति है, जिसके द्वारा मनुष्य किसी विशेष लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कोई क्रिया सम्पन्न करता है, इस क्रिया को किसी विशेष दिशा की ओर प्रवाहित करता है तथा कार्य सम्पन्न होने तक उसे शक्ति प्रदान करता है।

अभिप्रेरण : उद्देश्य एवं महत्व

प्रत्येक संगठन में कार्य अभिप्रेरण का अपना विशिष्ट महत्व होता है। प्रबंध एवं प्रशासन के क्षेत्र में इसकी उपादेयता उन कारणों से बढ़ी है जिनकी पूर्ति अभिप्रेरण से होती है अर्थात् अभिप्रेरण के उद्देश्य ; जो इस प्रकार हैं –

1. कार्मिकों को स्वेच्छा से अधिकाधिक कार्य के लिए प्रोत्साहित करना।
2. कार्मिकों का मनोबल बढ़ाना। मनोबल से तात्पर्य उस बल से है जो व्यक्ति को ऊर्जा एवं स्फूर्ति प्रदान करता है। यह कार्मिक की कार्य के प्रति उसकी अभिवृत्तियों का भी परिचायक है।
3. कार्मिकों की कार्य–संतुष्टि का स्तर ऊँचा बनाए रखना तथा उन्हें उनकी कार्य–उपलाब्धियों का अनुभव कराना।
4. संगठन, कार्मिकों तथा कार्य के मध्य सामंजस्य स्थापित करना।
5. कार्मिकों की आर्थिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, शारीरिक तथा मानसिक आवश्यकताओं की पूर्ति करना।
6. कार्मिकों के विभिन्न औपचारिक एवं अनौपचारिक समूहों तथा संगठन के मध्य सहयोग की भावना विकसित करना।
7. कार्मिकों में स्वनियन्त्रण की प्रवृत्ति का विकास करना।
8. संगठन के समस्त संसाधनों के समुचित दोहन एवं संगठनात्मक लक्ष्यों के संदर्भ में नियोक्ता– कार्मिक भीगीदारी सुनिश्चित करना।

उपरोक्त, उद्देश्यों की प्राप्ति अभिप्रेरण के माध्यम से संभव होती है। व्यवस्थित अभिप्रेरण प्रक्रिया कार्यनिष्पादन में वृद्धि करती है। इसे इस सूत्र से समझ सकते हैं –

कार्यनिष्पादन = कुशलता X अभिप्रेरण

अर्थात्, अभिप्रेरणा कार्य कुशलता में गुणात्मक वृद्धि भी करती है। संगठन का शीर्ष नेतृत्व तथा अन्य पर्यवेक्षक, निःसंदेह, अभिप्रेरणा प्रक्रिया में सकारात्मक भूमिका निभाते हैं, साथ ही, संगठन की नीतियाँ, कार्यप्रणाली, संस्कृति, संचार तथा मानव संसाधन विकास एवं प्रबन्धन की समस्त प्रक्रियाएँ अभिप्रेरण को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष, दोनों रूपों से प्रभावित करती हैं।

अभिप्रेरण : प्रकार

सूक्ष्म एवं गहन दृष्टि से, अभिप्रेरण प्रक्रिया से सम्बन्धित प्रेरणाओं, कारकों तथा परिस्थितियों के आधार पर अभिप्रेरण को निम्नलिखित प्रकारों में बाँटा जा सकता है –

I- **सकारात्मक अभिप्रेरण** ; जिसके अन्तर्गत कार्मिकों को लाभ, पारिश्रमिक , आनंद, संतुष्टि की आशा रहती है। जैसे – पदोन्नति, नकद पारिश्रमिक, कार्य–सुरक्षा आश्वासन, सेवा–शर्तों में सुधार, पुरस्कार, प्रंशसा आदि।

नकारात्मक अभिप्रेरण ; इसमें भय या नकारात्मक वातावरण से कार्मिकों को कार्य हेतु प्रभावित किया जाता है। जैसे – पदावनति, वेतन–भत्तों में कमी या वृद्धि में रोक, प्रतिकूल वार्षिक गोपनीय प्रतिवेदन, निलम्बन या बर्खास्तगी, डाँट–फटकार, मौद्रिक दण्ड, अनुशासनात्मक कार्यवाही आदि।

II- **औपचारिक अभिप्रेरण** ; संगठन के लिखित कानूनों, नियमों तथा प्रक्रियाओं के अन्तर्गत प्रेरित करना।

अनौपचारिक अभिप्रेरण ; अनौपचारिक रूप से, व्यक्तिगत या सामूहिक सम्बन्धों के आधार पर प्रंशसा, आदर या अलोचना के माध्यम से अभिप्रेरित करना।

III- **व्यक्तिगत अभिप्रेरण** ; किसी एक कार्मिक को औपचारिक या अनौपचारिक रूप से, सकारात्मक या नकारात्मक रूप से अभिप्रेरित करना।

समूहिक अभिप्रेरण ; समूह को लक्ष्य बनाकर अभिप्रेरित करना। आदि।

अनेक प्रशासकीय एवं प्रबन्धकीय विद्वानों ने अभिप्रेरणा के सिद्धान्त या विचारधाराओं तथा विधियों का प्रतिपादन कर अभिप्रेरण की व्यवस्थित प्रक्रिया विकसित करने का प्रयास किया है। वस्तुतः, अभिप्रेरण एक जटिल तथा अनिश्चित प्रक्रिया है जो व्यक्ति, कार्य एवं परिस्थितियों द्वारा तय होती है।

नियन्त्रण की अवधारणा

सामान्यतः नियन्त्रण को नकारात्मक तथा प्रतिबन्धक अर्थों में लिया जाता है, किन्तु , सांगठिक नियन्त्रण प्रक्रिया संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति तथा कार्य–निगरानी का एक महत्वपूर्ण उपकरण है जो निरीक्षण, पर्यवेक्षण, समन्वय, अभिप्रेरण आदि संगठनात्मक तत्वों के साथ मिलकर सकारात्मक अर्थ रखता है।

शब्दकोश के अनुसार, ''निर्देश देने, आदेश देने तथा प्रबन्ध करने की सत्ता या शक्ति ही नियन्त्रण है।''

थियो हैमेन के शब्दों में, ''नियन्त्रण, देखभाल करने की एक प्रक्रिया है, जिससे यह पता किया जा सके कि नियोजन का अनुसरण किया जा रहा है नहीं, लक्ष्यों की दिशा में प्रगति हो रही है या नहीं और यदि आवश्यक हो तो सुधार के लिए क्या प्रयास किए जाएँ?''

मैक्फारलैण्ड के शब्दों में, ''नियन्त्रण एक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा अधिकारी अपने अधीनस्थों के निष्पादन की तुलना, निर्धारित योजनाओं, आदेशों, उद्देश्यों अथवा नीतियों के अनुसार या इनके निकट करते हैं।''

ई.एफ.एल.ब्रेच के अनुसार, ''निर्धारित प्रमापों या योजनाओं से वास्तविक निष्पादन की तुलना करने की प्रक्रिया नियन्त्रण है, जिससे इस बात का पता लगता है कि पर्याप्त प्रगति या संतोषजनक निष्पादन हो रहा है या नहीं।''

वस्तुतः, कार्य की प्रगति की देखरेख तथा परिणामों के अर्थ में होने वाली संभावित असफलता से बचने के लिए 'नियंत्रण' की आवश्यकता पड़ती ही है। यह एक 'सुधारात्मक उपाय' होता है जिसे प्रायः 'प्रबन्ध का नकारात्मक पक्ष' मान लिया जाता है क्योंकि यह संगठन में उपजी अकर्मण्यता, अनैतिकता, अनुत्तरदायित्व, अव्यवस्था तथा भ्रष्टाचार जैसी जटिल समस्याओं की रोकथाम से सम्बन्धित होता है।

इस तरह, 'नियंत्रण' संगठन में दो तत्वों के नियंत्रण का क्षेत्र है ; कार्मिक–नियंत्रण तथा कार्य–नियंत्रण। नियंत्रण प्रक्रिया, उपरोक्त अवधारणा के आधार पर, तीन तत्वों पर आधारित होती है –

- **मानकों का सुस्थापन** ; कार्य एवं कार्य–व्यवहार के निश्चित मानकों, आदर्शों (गुणात्मक एवं मात्रात्मक दोनों) का निर्धारण करना।

- **स्थापित मानकों से वास्तविक कार्य निष्पादन की तुलना** ; कार्य प्रगति के समय ही उसके परिणामों का मूल्यांकन कर वास्तविक कार्य निष्पादन एवं मानक कार्य निष्पादन के मध्य के अंतर कारण सहित प्राप्त करना।
- **सुधारात्मक कदम उठाना** ; आदेश, निर्देश द्वारा सुधारात्मक कदम उठाना, जिससे वास्तविक कार्य निष्पादन स्थापित मानकों के निकट पहुँच सके।

नियंत्रण : प्रकार एवं महत्व

नियंत्रण की आवश्यकता एवं स्वरूप सम्बन्धित संगठन के कार्यक्षेत्र एंव प्रकृति पर निर्भर करता है। सामान्यतः नियन्त्रण को निम्नलिखित रूप से श्रेणीबद्ध किया जाता है –

– **कार्मिक नियन्त्रण** ; प्रशिक्षण, कार्य–व्यवहार।

– **वित्तीय नियन्त्रण** ; लेखांकन, लेखापरीक्षण।

– **संसाधन नियन्त्रण** ; भौतिक, प्राकृतिक, चल–अचल संपित्त।

– **सुरक्षा हेतु नियन्त्रण** ; संसाधनों की सुरक्षा।

– **नीतिगत नियन्त्रण** ; नीति–संरचना, कार्यक्रम एवं परियोजना स्वीकृति नियन्त्रण।

– कार्य प्रणाली एवं तकनीक पर नियन्त्रण।

– शोध, विकास एवं कल्याण हेतु नियन्त्रण।

– जन सम्पर्क, संगठन की साख, प्रचार नियन्त्रण। आदि।

लोक प्रशासनिक संगठनों में, प्रायः रूढ़िवादी तरीके से नियन्त्रण संपादित किया जाता है। इनमें प्रमुख हैं – वित्तीय नियन्त्रण, कार्मिक नियन्त्रण, संसाधन नियन्त्रण, परियोजना नियन्त्रण, भण्डार नियन्त्रण, सेवा–शर्तें नियन्त्रण, वैधानिक एवं राजनीतिक नियन्त्रण, आचरण–नियन्त्रण, जनशिकायत नियन्त्रण, सरकारी सत्ता के दुरूपयोग पर नियन्त्रण, स्वविवेक अधिकारों पर नियन्त्रण तथा लेखा नियन्त्रण आदि। साथ ही , विधायी नियन्त्रण, कार्यपालिका नियन्त्रण, न्यायिक नियन्त्रण, जनमत तथा मीडिया द्वारा नियन्त्रण भी लोक प्रशासन के प्रभावी नियंत्रण के माध्यम हैं।

वस्तुतः, प्रत्येक संगठन की संरचना तथा कार्यप्रणाली अपने आप में नियन्त्रण का एक स्वरूप ही होती है, इसके अलावा एवं इससे सम्बन्धित नियन्त्रण के अन्य महत्वपूर्ण साधन एवं तकनीकें हैं–

- नियम, कानून, प्रक्रियाएँ तथा कार्यविधियाँ,
- प्रत्येक पद पर अधिकार एवं उत्तरदायित्व का स्वरूप,
- आचार संहिता एवं सेवा–शर्तें,
- आन्तरिक अनुशासन तथा शिकायत निवारण तन्त्र,
- आदेश की एकता,
- उच्च स्तरीय पदाधिकारियों द्वारा निरीक्षण, पर्यवेक्षण, प्रतिवेदन–प्राप्ति,
- बजट, लेखांकन प्रक्रिया तथा लेखापरीक्षण,
- अवलोकन, समन्वय एवं अभिप्रेरण तकनीकें । आदि।

प्रभावशीली नियन्त्रण हेतु आवश्यक है कि यह संगठनात्मक स्वरूप में किया जाना चाहिए, उपयुक्त एवं सम्पूर्ण होना चाहिए, मितव्ययतापूर्ण होना चाहिए, भविष्यलक्षी होना चाहिए, परिणामोन्मुखी होना चाहिए तथा सबसे अधिक महत्वपूर्ण है – व्यक्ति आधारित नहीं, पद एवं कार्य आधारित नियन्त्रण होना चाहिए।

पर्यवेक्षण (Supervision)

पर्यवेक्षण (Supervision) प्रशासन में एक महत्वपूर्ण कार्य है। हम परिचित हैं कि प्रत्येक संगठन पदसोपनिक व्यवस्था (Hierarchical System) के अन्तर्गत अनेक स्तरों में बँटा होता है जिसमें प्रत्येक कार्मिक अपने से सीधे ऊपर वाले अधिकारी के नियन्त्रण में होता है तथा प्रत्येक कार्मिक अपने से अधीनस्थ पद स्तरों पर संलग्न कार्यों के समुचित निष्पादन एवं कार्यरत् व्यक्तियों में समन्वय हेतु चार विधियों का उपयोग करता है – नियन्त्रण, पर्यवेक्षण, संचार तथा नेतृत्व। इस तरह ऊपर से नीचे तक पर्यवेक्षण की कड़ी संगठन को सुगठित बनाए रखती है। पर्यवेक्षण, अंग्रेजी भाषा के शब्द Supervision का हिन्दी रूपान्तरण है, जो दो शब्दों से मिलकर बना है – Super + Vision, जिसका शाब्दिक अर्थ होता है, श्रेष्ठ दृष्टि, देखने की श्रेष्ठ शक्ति, अर्थात् दूसरों

के कार्यों का अधीक्षण करना। सरल शब्दों में, उच्चाधिकारी या वरिष्ठ द्वारा निम्नाधिकारी या कनिष्ठ के कार्यों को अधिकारपूर्ण ढंग से जाँचना, निर्देश देना तथा परामर्श देना ही पर्यवेक्षण है।

पर्यवेक्षण : अवधारणा एवं प्रकार

लोक प्रशासन में पर्यवेक्षण से अर्थ 'सत्ता सहित किसी कार्य या व्यक्ति की देखरेख' से है।

हेनरी रेनिंग के शब्दों में, '' दूसरों के कार्यों का प्राधिकार के सहयोग से निर्देशन ही पर्यवेक्षण है।''

टेरी एवं फैंकलिन के अनुसार, ''पर्यवेक्षण का अर्थ है कर्मचारियों के प्रयासों एवं अन्य संसाधनों का मार्गदर्शन तथा निर्देशन करना जिससे कि अपेक्षित कार्य परिणाम प्राप्त किए जा सकें।''

मार्गरेट विलियमसन के मतानुसार, ''पर्यवेक्षण एक प्रक्रिया है, जिसके अन्तर्गत कार्मिकों को उनकी आवश्यकतानुसार सीखने, अपने ज्ञान तथा कौशल का सर्वोत्तम उपयोग करने तथा योग्यताओं में सुधार करने में किसी पदाधिकारी की सहायता प्राप्त होती है ताकि कार्मिक अधिक प्रभावशाली ढंग से कार्य कर सकें जिससे कर्मचारियों एवं उनके संगठन को अधिकाधिक संतोष मिलता रहे।''

पर्यवेक्षण एक सतत् चलने वाली प्रक्रिया है, जिसे सामान्यतः दो दृष्टिकोणों से देखा जाता है –

- **नकारात्मक दृष्टिकोण** ; पारम्परिक पर्यवेक्षण जिसमें अधीनस्थों की गतिविधियों की जाँच उनकी कमियों को ढूँढने एवं उनमें भय का वातारण निर्मित करने से सम्बन्धित होता है।

- **सकारात्मक दृष्टिकोण** ; नवीन, मानवीय, सुधारात्मक पर्यवेक्षण जिसमें कार्मिकों के कार्यों की जाँच उनके कार्य की सर्वोत्तम दशाएँ उपलब्ध कराने, कार्य–सुविधाओं का ध्यान रखने, कार्य–समस्याओं पर निगाह रखने तथा उन्हें मार्गदर्शन एवं प्रोत्साहन देने से सम्बन्धित होता है।

पर्यवेक्षण एक प्रशासनिक प्रक्रियागत कौशल युक्त विधि है जो प्रत्यक्ष रूप से समन्वय, अनुशासन, अभिप्रेरण, नेतृत्व, कार्मिक–कार्य संतोष, निष्पादन क्षमता, संचार प्रक्रिया तथा संगठन में अनौपचारिक संगठन की प्रभावशीलता से भी जुड़ी होती है।

मिलेट ने पर्यवेक्षण के दो भेद बताये हैं –

- **मूलभूत या वास्तविक पर्यवेक्षण** ; यह संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए किए जाने वाले वास्तविक कार्य से सम्बन्धित होता है।
- **तकनीकी पर्यवेक्षण** ; यह संगठन में उद्देश्य प्राप्ति हेतु किए जा रहे कार्यों के तरीके, तकनीकों, तकनीकी उपकरणों के उपयोग आदि से सम्बन्धित होता है।

सामान्यतः पर्यवेक्षण को निम्नलिखित प्रकारों में विभाजित किया जाता है –

1. **एकल तथा बहुल पर्यवेक्षण** – जब किसी कार्य या व्यक्ति का पर्यवेक्षण एक व्यक्ति द्वारा किया जाता है तब यह एकल पर्यवेक्षण है तथा जब यह एक से अधिक व्यक्तियों, समूह या समिति द्वारा किया जाता है तब इसे बहुल पर्यवेक्षण कहते हैं।
2. **सूत्र तथा कार्यात्मक पर्यवेक्षण** – संगठन की पदसोपानिक श्रृंखला से जुड़ा, आदेश एंव निर्देश की रेखा से जुड़ा मूलभूत पर्यवेक्षण सूत्र पर्यवेक्षण है तथा विषय–विशेषज्ञों, लेखा–परीक्षकों या O & M (संगठन एवं प्रबन्धन/प्रविधि) इकाई से जुड़े व्यक्तियों द्वारा किया जाने वाला पर्यवेक्षण कार्यात्मक पर्यवेक्षण है।

पर्यवेक्षण हेतु अनेक विधियाँ एवं तकनीकें होती हैं जो संगठन के उद्देश्यों, कार्य की प्रकृति कार्मिक–व्यक्तित्व तथा अन्य कई कारकों पर निर्भर करती हैं। इनमें से कुछ प्रमुख हैं – पूर्व स्वीकृति विधि, कार्य मानकीकरण, बजट–प्रक्रिया, प्रतिवेदन, कार्मिक–स्वीकृति विधि, निरीक्षण आदि।

पर्यवेक्षक के कार्य एवं गुण

चूंकि, पर्यवेक्षण की सम्पूर्ण प्रक्रिया संगठन के अन्य महत्वपूर्ण सिद्धान्तों एवं गतिविधियों से प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से जुड़ी होती है इसलिए पर्यवेक्षक के कार्य बहु–आयामी हो जाते हैं और प्रभावी पर्यवेक्षण हेतु आवश्यक गुण भी समग्र रूप से बढ़ जाते हैं।

पर्यवेक्षक के कार्य (या पर्यवेक्षण–कार्य) हैं –

एच. निसेन के अनुसार ; –

1. पर्यवेक्षक को अपने पद के कार्यों, कर्तव्यों एवं उत्तरदायित्व का पूरा ज्ञान होना चाहिए।
2. उद्देश्य प्राप्ति हेतु कार्य योजनाएँ बनाना।
3. अधीनस्थों में कार्यों का विभाजन करना तथा प्रत्येक को उसके कर्तव्य पालन हेतु प्रेरित करना।

4. कार्यप्रणाली, नियमों तथा कार्यविधियों की जानकारी होना तथा आवश्यक सुधार करना।
5. स्वयं के ज्ञान, कौशल तथा सूचना को निरन्तर बढ़ाते रहना।
6. अधीनस्थों को प्रशिक्षित करना।
7. कार्य–मूल्यांकन करना।
8. गलतियों को सुधारना, कार्य की कठिनाईयों को दूर करना तथा अनुशासन बनाए रखना।
9. संगठन की नीतियों से अधीनस्थों को अवगत कराना तथा संगठन की संरचना एवं अन्य परिवर्तनों से अवगत कराना।
10. सहकर्मियों तथा अधीनस्थों के साथ सहयोग भाव से कार्य करना।
11. अधीनस्थों की शिकायतों को सहानुभूति पूर्वक सुनना तथा उन्हें दूर करने का प्रयास करना।
12. अधीनस्थों के सुझावों को सम्मानजनक ढंग से प्राप्त करना तथा उस पर मनन करना।

उपरोक्त कार्यों हेतु तथा प्रभावी पर्यवेक्षण हेतु एक अच्छे पर्यवेक्षक में निम्नलिखित आवश्यक गुण होने चाहिए –

1. उसे अपने पद से सम्बन्धित कार्यों का पूरा ज्ञान होना चाहिए। कार्य सम्बंधी अधिकार, निर्देश, आदेश एवं उत्तरदायित्व का बोध होना चाहिए।
2. पर्यवेक्षण का सकारात्मक दृष्टिकोण, जो कि अधीनस्थ अपने पर्यवेक्षक से अपेक्षित करते हैं, कि पूर्ति हेतु पर्यवेक्षक में एक अच्छे शिक्षक, प्रशिक्षक तथा मार्गदर्शक के गुण होने चाहिए।
3. उसका अपने कार्य के प्रति प्रेम, सम्मान तथा उत्साह होना चाहिए तभी वह अधीनस्थों को भी कार्य में सुधार एवं रूचि के लिए प्रेरित कर सकता है।
4. व्यक्तिगत योग्यताएँ जैसे – दृढ़ चरित्र, नैतिकता, सदाचार, धैर्य तथा कार्य एवं व्यक्ति के प्रति वस्तुनिष्ठता के गुण होने चाहिए।
5. प्रबन्धकीय योग्यता, जिज्ञासा, बौद्धिक सर्तकता तथा नवाचार की प्रवृत्ति वाला व्यक्ति होना चाहिए।
6. पर्यवेक्षक संवाद–कौशल में निपुण तथा साहसी होना चाहिए क्योंकि जाँच, निगरानी, आदेश एवं सुधार हेतु यह गुण अति आवश्यक हैं।
7. निष्पक्षता, न्यायप्रियता, सहानुभूति एवं संवेदनशीलता के गुणों के साथ–साथ भावनात्मक एवं तार्किक रूप से संतुलित होना चाहिए।

उपरोक्त गुण, एक प्रशासक, प्रबन्धक या उच्चाधिकारी को सफल पर्यवेक्षक होने में सहायक होते हैं तथा 'कार्य–केन्द्रित पर्यवेक्षक' तथा 'कार्मिक – केन्द्रित पर्यवेक्षक' के मध्य संतुलित हो पाने में सफलता प्रदान करते हैं।

प्रबन्ध में मानव सम्बन्ध : एल्टन मेयो

प्रत्येक अध्ययन विषय के अध्ययन–क्षेत्र, उसकी प्रकृति एवं अध्ययन उपागम को निर्धारित करने के लिए चिन्तकों, विचारकों एवं बुद्धिजीवियों द्वारा विचारधारा एवं उपागमों का सृजन किया जाता रहा है। लोकप्रशासन एवं प्रबन्ध, इन दोनों ही विषयों में कुछ विचारधाराएँ समान रूप से महत्वपूर्ण एवं लोकप्रिय रहीं है तथा प्रबन्ध की कुछ विचारधाराओं को लोकप्रशासन में ससम्मान स्वीकार किया गया है। इनमें से प्रमुख हैं – वैज्ञानिक प्रबन्धन, मानव सम्बन्ध उपागम एवं व्यवहारवादी विचारधारा। वैज्ञानिक प्रबन्ध विचारधारा का अध्ययन हम इस इकाई के आरम्भ में कर चुके हैं।

मानव सम्बन्ध विचारधारा (Human Relation Theory) 1930 के दशक में संगठनात्मक विश्लेषण के शास्त्रीय दृष्टिकोण (प्रारम्भिक विचारधाराओं, सिद्धान्तों) की प्रतिक्रिया के रूप में सामने आई। आनुभाविक (Empirical) शोधों के माध्यम से प्रबन्ध एवं प्रशासन के शास्त्रीय/पारम्परिक दृष्टिकोण की कमियों को पहचान कर उसे रूपान्तरित करने का प्रयास किया। उदाहरणार्थ; इस विचारधारा के उदय के पूर्व तक प्रबन्ध एवं प्रशासन में संगठनात्मक विश्लेषण, कार्यात्मक अवलोकन, प्रबन्धकीय कार्यों आदि पर ध्यान केन्द्रित किया जाता था, किन्तु, संगठन में कार्यरत् व्यक्तियों (कार्मिकों) से सम्बन्धित मानवीय पक्षों पर किसी भी तरह का ध्यान केन्द्रित नहीं था। अतः अनेक तरह के शोधों एवं शोध–प्रविधियों के उपयोग एवं अध्ययन उपरान्त प्राप्त आंकड़ो द्वारा प्रबन्ध के अमानवीय दृष्टिकोण को अस्वीकार करते हुए संगठन एवं प्रबंध में 'मानव तत्व' को स्थापित, परिभाषित एवं विकसित करने का प्रयास किया गया, जिसे समग्र रूप से 'मानव सम्बन्ध विचारधारा' कहा गया। इस विचारधारा के तत्वों/अध्ययन विषय वस्तुओं के आधार पर इसे 'अनौपचारिक संगठन उपागम', 'सामाजिक – आर्थिक उपागम', ' चिकित्सकीय पद्धति' (Clinical Method) भी कहा जाता है।

इस विचारधारा का जनक या संस्थापक एल्टन मेयो (Elton Mayo) को माना जाता है। इनके साथ ही एफ.जे. रोथलिस्बर्गर, विलियम जे. डिक्सन, टी.नार्थवाइटहेड, डब्ल्यू. लॉयड, ई.

वॉर्नर, एल. जे. हेंडरसन, जॉन डेवी तथा कर्ट लेविन आदि ने भी प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से इस विचारधारा या अध्ययन शाखा के विकास में अपना अति महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

एल्टन मेयो तथा हॉथोर्न शोध अध्ययन

जॉज एल्टन मेयो का जन्म आस्ट्रेलिया के एडीलेड शहर में 26 दिसम्बर, 1880 को हुआ। तर्क, नीति तथा मनोविज्ञान के अध्ययन तथा अध्यापन से जुड़े मेयो के विचारों तथा शोध–परिणामों ने ओद्यौगिक समाजशास्त्र तथा मनोविज्ञान के क्षेत्रों के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। 1920 में अमेरिका प्रस्थान कर मेयो ने ओद्यौगिक अनुसंधान के प्रोफेसर के रूप में कार्य किया। यहाँ उनके एंव उनके साथियों द्वारा किए गए हॉथोर्न प्रयोगों ने विश्व प्रसिद्धी प्राप्त की। सेवानिवृत्ति पश्चात् वर्ष 1994 में ब्रिटेन में मेयो की मृत्यु हो गयी। मेयो ने अनेक पुस्तकें तथा लेख लिखे। इनमें से कुछ प्रमुख हैं–

- Democracy And Freedom (1919)
- The Human Problems Of An Industrial Civilization (1933)
- The Social Problems Of An Industrial Civilization (1945)
- The Political Problems Of An Industrial Civilization (1947)
- What Is Monotony
- Changing Methods In Industry
- Supervision And What It Means

मेयो ने उद्यमों, संगठनों में मजदूरों एवं कार्मिकों के शारीरिक, सामाजिक, आर्थिक तथा मनोवैज्ञानिक पक्षों पर ध्यान केन्द्रित करते हुए उनके कार्य–व्यवहार तथा उनकी उत्पादन क्षमता संबंधी शोध किए। मेयो के प्रयोगों को सरलता की दृष्टि से तीन भागों में बाँटा जा सकता है–

– 1923 में फिलाडेल्फिया की एक कपड़ा मिल में किए प्रयोग जिसे 'प्रथम खोज' के नाम से जाना जाता है।

– 1924 से 1932 तक किए प्रयोग, जिसे हॉथोर्न प्रयोग के नाम से जाना जाता है।

– 1943 में किए प्रयोग, जो उद्योगों में अनुपस्थितिवाद से सम्बन्धित थे।

हॉथोर्न प्रयोग तथा मानव सम्बन्ध उपागम एक दूसरे के पर्याय माने जाते हैं क्योंकि इस शोध–अध्ययन के परिणाम ही मानव सम्बन्ध विचारधारा की आधारभूत मान्यताएँ तथा सिद्धान्त बनें। यह अध्ययन मेयो के नेतृत्व में हावर्ड बिजनेस स्कूल द्वारा हॉथोर्न (शिकागो, अमेरिका के

निकट) स्थित वेस्टर्न इलैक्ट्रिक कंपनी में किए गए। इस शोध का उद्देश्य यह ज्ञात करना था कि संगठन की उत्पादकता में कमी के क्या कारण हैं। इन्हें निम्नलिखित चार चरणों में संपादित किया गया –

1. **महान प्रकाश व्यवस्था प्रयोग** (1924–1928) (The Great Illumination Experiment)

यह शोध तीन चरणों में किया गया। इस शोध का उद्देश्य था; 'प्रकाश व्यवस्था अर्थात् भौतिक तत्वों का प्रभाव कर्मचारियों की कार्यदक्षता तथा उनकी उत्पादकता पर कितना पड़ता है?''

शोध उपरान्त, मेयो ने निष्कर्ष में पाया कि–

- कार्य–संतुष्टि मूलतः अनौपचारिक सामाजिक संरचना पर निर्भर है।
- औपचारिक संगठन में, 'अनौपचारिक समूह' का महत्वपूर्ण आस्तित्व एवं भूमिका होती है।

2. **मानवीय अभिवृत्तियाँ तथा भावनाएँ** (1928–1931) (Human Attitudes & Sentiments) इस शोध का उद्देश्य यह ज्ञात करना था कि; श्रमिकों की शिकायतों और वह उद्देश्य जिसके सम्बन्ध में शिकायतें निर्देशित की थी उनमें प्रत्यक्ष कोई सम्बन्ध है या नहीं?'

शोध उपरान्त, मेयो ने निष्कर्ष में पाया कि –

- श्रमिकों की शिकायतें दो अलग श्रेणियों की थीं – प्रत्यक्ष एवं भौतिक शिकायतें तथा अप्रत्यक्ष एवं मनोवैज्ञानिक शिकायतें।
- श्रमिकों की पारिवारिक एवं व्यक्तिगत समस्याएँ उनकी कार्य–क्षमता को प्रभावित करती हैं।
- प्रबन्धक, पर्यवेक्षकों द्वारा श्रमिकों की भावनाओं एवं अभिवृत्तियों को समझ कर, सकारात्मक व्यवहार द्वारा उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है।

3. **सामाजिक संगठन प्रयोग** (1931–1932) (Social Organisation Experiment)

इस प्रयोग का उद्देश्य कार्य स्थल पर उत्पादन लक्ष्य तथा मानक उत्पादन निश्चित करने तथा प्राप्त करने में श्रमिक समूहों की भूमिका को ज्ञात करना था। शोध उपरान्त, मेयो ने निष्कर्ष में पाया कि –

- समूह के व्यवहार का प्रबन्धन के मानकीय औपचारिक व्यवहार के साथ सीधा सम्बन्ध नहीं होता।
- श्रमिकों की मान्यता थी कि विशेषज्ञता और कुशलता के तर्क, मानवीय तथा सामूहिक गतिविधियों को बाधित करते हैं।

- कुशलता का तर्क संवेदनाओं के उस तर्क से मेल नहीं रखता जो 'सामाजिक व्यवस्था' का आधार बने।

हॉथोर्न प्रयोगों के परिणामों से लोकप्रिय हुए इस दृष्टिकोण, को अन्य विद्वानों ने भी अपने शोध एवं विचारों से पोषित किया।

मानव सम्बन्ध उपागम : विशेषताएँ

इस प्रकार, प्रशासनिक कुशलता तथा संगठनात्मक गतिशीलता पर मानव–सम्बन्ध विचारधारा के महत्व को विकसित किया गया, जिसकी प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं –

1. संगठन का प्रत्येक मनुष्य (कार्मिक) मात्र मशीन या मशीन का पुर्जा नहीं अपितु सजीव, संवेदनशील तथा अपने–अपने विचारों से युक्त एक इकाई है जो समूह के नियमों से प्रभावित होता है।
2. नियोक्ता, प्रबन्धकों तथा कार्मिकों के मध्य सम्बन्ध हमेशा कानूनों या नियमों से निर्धारित–संचालित नहीं होते हैं बल्कि ये सम्बंध कानूनी तत्वों की अपेक्षा नैतिक तथा मनोवैज्ञानिक तत्वों से अधिक सम्बन्धित एवं प्रभावित होते हैं।
3. औपचारिक संगठन के भीतर अनौपचारिक संगठन उसके छाया संगठन की भांति होता है जो कार्यस्थल पर मनुष्य की सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं को संतुष्ट करता है तथा प्रशासनिक कुशलता, समन्वय, संवाद तथा संचार में बहुत महत्वपूर्ण होता है।
4. कार्यरत् व्यक्तियों के एकीकरण, सामूहिकीकरण तथा मानवीय अन्तरसम्बन्धों के माध्यम से कठोर कानूनों, नियमों, संरचना तथा परम्परागत कार्य–तरीकों में आवश्यकतानुसार लोचशीलता लाई जा सकती है।
5. कार्य अनुपस्थिति, उदासीनता, थकान शारीरिक एवं मानसिक कारणों से पैदा होते हैं जिनके समाधान मानवीय दृष्टिकोण से ही प्राप्त किए जा सकते हैं।
6. शास्त्रीय विचारधारा के विपरीत यह उपागम स्वीकार करता है कि संगठन में प्राधिकार/सत्ता ऊपर से नीचे नहीं अपितु नीचे से ऊपर की ओर होती है तथा मानव–सम्बन्धों से उपजती तथा विकसित होती है।
7. कार्मिक एक 'सामाजिक मनुष्य' है जो समूह द्वारा निर्धारित मापदण्डों तथा प्रतिमानों से प्रभावित होता है, साथ ही, स्वयं की समस्याओं के कारण संगठन के कार्यकरण को प्रभावित करता है।

8. यह विचारधारा कार्मिकों को आदर्शोन्मुखी बनाने के लिए ठोस पद्धतियों ढूँढने से सम्बन्धित है तथा इस हेतु अभिप्रेरण तथा पर्यवेक्षण की जनतांत्रिक शैली अपनाने, कार्मिक के सामाजिक परिवेश तथा संगठन के समाजशास्त्रीय अध्ययन करने, एवं संगठन के समस्त संसाधनों के सदुपयोग पर बल देती है।
9. यह विचारधारा संगठन के कार्यकलापों तथा प्रक्रियाओं को समझने तथा उनका सही निर्धारण करने के लिए कार्मिक की बहुआयामी प्रकृति तथा उनकी पारस्परिक प्रतिक्रियाओं का विश्लेषण करने, कार्मिकों की समस्याओं का समाधान तथा कार्य–संतुष्टि, कार्मिकों की प्रबन्ध में सहभागिता आदि पर ध्यान केन्द्रित करने को महत्व देती है। आदि।

'मानव–सम्बन्ध' एक लोकप्रिय उपागम है, तथापि विद्वानों की आलोचना से मुक्त नहीं है। इस उपागम की विभिन्न आधारों पर आलोचना की जाती रही है, किन्तु, आलोचक भी यह स्वीकार करते हैं कि समूह व्यवहार , अनौपचारिक संगठनों की उपादेयता तथा कार्य एवं कार्मिकों के मनोवैज्ञानिक अध्ययन के महत्व को किसी भी दृष्टि से अस्वीकार नहीं किया जा सकता है और इसमें मेयो का योगदान, निःसंदेह, सर्वोत्तम है।

————————